Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 GISRRJ | Volume 2 | Issue 6 | ISSN : 2582-0095

ऋग्वेद में धर्म का स्वरूप

डा0 प्रभात कुमार
असिस्टेन्ट प्रोफेसर संस्कृत–विभाग नेहरू ग्राम भारती डीम्ड विश्वविद्यालय प्रयागराज।

धर्म शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए कहा जा सकता है[1] कि धर्म शब्द धृ धारणे धातु से बना है। यथा (i) ध्रियते लोकः अनेन अर्थात् धर्म वह है जिससे लोक को धारण किया जाय। (ii) धरति धारयति. वा लोकम् अर्थात् धर्म वह है जो संसार को धारण करता है। (iii) धियते लोकयात्रानिर्वाहार्थं यः सः धर्मः अर्थात् धर्म वह है जिसे लोकयात्रा निर्वाहार्थ सभी धारण करें। अतः हम कह सकते हैं कि धर्म का तात्पर्य धारण करने से है। आर्यों के प्राचीनतम साहित्य ऋग्वेद में वैदिक युग की सभ्यता एवं संस्कृति का पूर्ण रूप उपलब्ध होता है। आर्यों का धर्म वैदिक धर्म कहलाता है वे वेदों को अपने धर्म का मूल मानते हैं। आज हिन्दुओं के धार्मिक स्वरूप में अनेक विभिन्नतायें हैं, कुछ ईश्वर के निराकार स्वरूप की उपासना करते हैं और कुछ उनका साकार रूप भी मानकर उसकी मूर्तियों की पूजा करते हैं, कुछ अनेक देवताओं को मानते हैं इसी को 'बहुदेववाद' भी कहते हैं, कुछ एकेश्वरवादी हैं। जो उसमें इन्द्र, वरुण, अग्नि आदि विभिन्न दैवी शक्तियों की कल्पना करते हैं। ऋग्वेद का मुख्य धार्मिक रूप देवताओं की उपासना करना है। निरुक्तकार ने देवताओं को तीन भागों में बाँटा है[2] पृथ्वी स्थानीय, अन्तरिक्षस्थानीय तथा धुस्थानीय। पृथ्वीस्थानीय में अग्नि, अन्तरिक्षस्थानीय में इन्द्र, तथा धुस्थानीय में सूर्य की गणना करते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य देवताओं की किस श्रेणी के प्रश्न में निरुक्तकार कहते हैं कि विभिन्न गुणों एवं कार्यों के कारण इन तीनों देवों की अनेक नामों से स्तुति की गयी है।[3]

(1) बहुदेववाद– ऋग्वेद में प्रधानतया 33 देवताओं की स्तुतिओं से बहुदेववाद का रूप दृष्टिगोचर होता है। उपासना करने पर ये मनुष्य को विभिन्न प्रकार के फल प्रदान करते थे। ऋग्वैदिक मण्डल में पुरुष देवताओं की बहुलता होने के साथ ही साथ कुछ देवियों के नाम भी मिलते हैं जिनमें सिन्धु नदी को तथा वाक् देवी सरस्वती को देवी के रूप में संज्ञा दी गयी है। समस्त देव समूह में इन्द्र, वरुण तथा अग्नि को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। इन्द्र को विश्व का स्वामी तथा युद्ध का देवता कहा गया है। कहीं कहीं इन्द्र की मूर्ति को शत्रुओं से रक्षा करने वाली कहा गया है।[4] वैदिक भाष्यकारों के अनुसार आर्य यज्ञ किया करते थे और मन्त्रों का पाठ करते हुए देवताओं का आह्वान करते थे। प्रायः सभी मन्त्र देवता परक हैं। ऋग्वैदिक देवता प्राकृतिक शक्तियों के या ईश्वर की दैवी शक्तियों और गुणों के प्रतीक थे।

(2) एकेश्वरवाद– ऋग्वेद में यद्यपि अनेक देवताओं की उपासना है, तथापि वैदिक मन्त्र का यह वाह्य अर्थ ही है। वेदों का आन्तरिक सन्देश मूल रूप में एक ही परम शक्ति के स्वरूप को उद्घाटित करना है। वैदिक ऋषियों ने वस्तुतः एक ही चेतन शक्ति की उपासना की थी, जो इस विश्व का मूल है। यह चेतन शक्ति ही परमात्मा, ईश्वर, पुरुष या ब्रह्म है। विभिन्न देवता उसी महान् शक्ति की विविध शक्तियों और गुणों को प्रकट करते हैं, इन गुणों के दैवी या लोकोत्तर होने के कारण इनको देवता की संज्ञा दी गयी है। ईश्वर के एकत्व की और उसमें देवता रूप अनेकत्व की स्थापना ऋग्वेद के अनेक मन्त्रों में की गयी है। यथा–

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यसः सुपर्णो गरुत्मान्।

एकं सद् विप्रा बहुधा–वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः।।[5]

उस परमात्मा के एक होते हुए भी विद्वान् उसको अनेक नामों से पुकारते हैं– इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, यम आदि– **य एक इत् तमु ष्टुहि कृष्टीनां विचर्षणिः। पतिर्जहो वृषक्रतुः।।[6]**

यास्क ने भी सभी देवताओं की आत्मा को एक कहा है–**महाभाग्याद् देवताया एक एव आत्मा बहुधा स्तूयते।** ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में पुरूष परमात्मा के असंख्य सिर, हाथ, पैर, आँख आदि बताये गये हैं और वह समस्त ब्रह्माण्ड को व्याप्त करके स्थित है।

सहस्त्रशीर्षा पुरुषः सहस्त्राक्षः सहस्रपात्।

स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम्।।

इससे परम पुरुष में सभी शक्तियों की कल्पना करके एकेश्वरवाद की प्रतिष्ठा की गयी है। मानव चिन्तन के इतिहास में यह अद्वैतवाद की प्रथम अनुभूति है।

नासदीय सूक्त सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए कहता है कि पहले कुछ नहीं था, एक मात्र परम पुरुष ब्रह्म की ही सत्ता थी। उनके मन में सृष्टि उत्पन्न करने की इच्छा हुयी उसने सृष्टि की रचना की तदन्तर देवता हुए–

नासदासीनों सदासीत्तदानीं नासीद्रजो नो व्योमा परोयत्।

किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भः किमासीद्गहनं गभीरम्।।[8]

प्रायः सभी प्राचीन ऋषियों ने वेदों की व्याख्या करते हुए उनमें एकेश्वरवाद की प्रतिष्ठा की थी। उन्होंने विभिन्न देवताओं को उसकी विभिन्न शक्तियाँ तथा गुण माना। आधुनिक युग में राममोहनराय ने भी वैदिक देवताओं को प्रतीकात्मक गुण माना। ऋषि दयानन्द ने वेद मन्त्रों के आधार पर प्रबल प्रमाणों द्वारा वेदों में एक ही ईश्वर की सत्ता को प्रमाणित किया है।

(3) यज्ञ– वैदिक धर्म को यज्ञों का धर्म कहा जाता है। प्रायः सभी विद्वानों की मान्यता है कि वेदों का प्रतिपाद्य विषय यज्ञ हैं। विद्वानों ने सायण को **''याज्ञिक भाष्यकार''** नाम दिया। परन्तु वेदों में यज्ञ के क्या तात्पर्य हैं, यह स्पष्ट नहीं हो सका है। सामान्यतः अग्नि जलाकर हवन करने और उसमें आहुतियाँ देने को यज्ञ कहा गया था। परन्तु यज्ञ के और भी अर्थ हैं। ब्रह्मयज्ञ, द्रव्ययज्ञ, तपोयज्ञ, भोगयज्ञ, दानयज्ञ, आदि का उल्लेख परवर्ती साहित्य में मिलता है। भगवान् को यज्ञस्वरूप कहकर उसे यज्ञेश्वर, यज्ञ पुरुष आदि नामों से अभिहित किया गया है। अनेक ऋषियों ने यज्ञ का अर्थ परोपकार किया है। यज्ञ शब्द का कुछ भी अर्थ क्यों न हो, ऋग्वेद उसका समर्थन करता है।

ऋग्वैदिक लोगों का परलोक विषयक विचार अधिक स्पष्ट नहीं हैं एक स्थान पर मृतात्मा को यम् द्वारा शासित लोक में शांतिपूर्वक सुख के साथ निवास करने वाला कहा गया है–

एकं सद् विप्राः बहुधा वदन्ति अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः।[9]

स्वर्ग की बड़ी सुन्दर एवं मनोरम कल्पना मिलती है, बताया गया है कि वहाँ दिन, रात, जल, सभी सुन्दर एवं आनन्दमय हैं। वहाँ मनुष्य सुन्दर एवं बलिष्ठ शरीर को प्राप्त करता है। नरक की कल्पना दुष्कर्मियों के लिए दण्ड स्थान के रूप में की गयी है ऐसा लगता है कि लोग पापकर्म से डरते थे।

अतः स्पष्ट होता है कि ऋग्वैदिक ऋषियों के विचार पूर्णतया आशावादी थे जिसमें निराशावाद की कोई झलक नहीं मिलती है। जीवन चाहे सत्य रहा हो या झूठ वे उसका पूर्ण उपभोग करना चाहते थे। ऋग्वेद दीर्घ आयु, रोगों से मुक्ति, वीर–सन्तति, धन,शक्ति, शत्रु पर विजय आदि की प्रार्थना से भरा हुआ है। ऋग्वैदिक ऋषि ने जीवन को बन्धन मानकर उसके सुखों की उपेक्षा करने का कभी प्रयास नहीं किया और न ही कायाक्लेश आदि में ही विश्वास किया।

सन्दर्भ सूची

1. धर्मद्रुम, अध्याय 1, पृष्ठ 1।
2. तिस्रः एव देवता इति नैरुक्ताः अग्निः पृथिवीस्थानीय, वायुर्वा इन्द्रो वाडन्तरिक्षस्थानः सूर्यो द्युस्थानः।। निरुक्त 7.5।
3. तासां महाभाग्यदेकैकस्यापि बहूनि नामधेयानि भवन्ति। अपि वा कर्मपृथक्त्वात्।। निरुक्त 7/5।
4. वैदिक एज–पृष्ठ–366
5. ऋग्वेद 1.164.46
6. ऋग्वेद 6.45.16
7. ऋग्वेद 10.9
8. ऋग्वेद 10.129
9. ऋग्वेद 1.164